International Journal of Applied Research 2021; 7(8): 04-06

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(8): 04-06
www.allresearchjournal.com
Received: 13-05-2021
Accepted: 05-07-2021

डॉ. गौरी भटनागर
Assistant Professor, (Sanskrit Department)/ Officiating Principal in Shri Durga Mahila Mahavidayalya, Tohana, Distt Fatehabad, Haryana, India

Corresponding Author:
डॉ. गौरी भटनागर
Assistant Professor, (Sanskrit Department)/ Officiating Principal in Shri Durga Mahila Mahavidayalya, Tohana, Distt Fatehabad, Haryana, India

पुराणों में वेदार्थ विस्तार

डॉ . गौरी भटनागर

शोध सार
पुराणों का आर्य वाङ्मय में विशेष स्थान है। पुराणों को पञ्चम वेद कहा गया है। [1] आर्य संस्कृति के सर्वाङ्गीण अध्ययन के लिये पुराणों का अत्यधिक महत्त्व है। पुराणों में तत्कालीन संस्कृति के प्रत्येक पहलू के दर्शन होते हैं। इसके साथ ही वैदिक अध्ययन के लिये तथा उन्हें समझने के लिये आर्य परम्परा पुराणों के अध्ययन को अनिवार्य समझती है। [2] पुराणों ने वेद के अगम्य ज्ञान को जनसाधारण के लिये सुलभ बनाया। आर्य-जीवन में वैदिक परम्परा को जीवित रखने तथा वेदानुगामी जनता को बचाये रखने का श्रेय पुराणों को है।

कूट शब्द: पञ्चम वेद, आर्य संस्कृति, आर्य-जीवन, वैदिक परम्परा

शोध पत्र
पुराणों में वेद के अर्थ का उपबृंहण अर्थात् किसी तथ्य की पुष्टि करने तथा उसका विस्तार करने का उपदेश है। यह तथ्य महाभारत काल में प्रादुर्भूत हो चुका था क्योंकि महाभारत में इस तथ्य के साधक अनेक वाक्य प्राप्त होते हैं। [3] वस्तुतः वेदप्रामाण्यवादी आचाय द्वारा ही प्रचलित पुराण ग्रन्थों का प्रणयन हुआ है, अतः पुराणों में स्थान-स्थान पर ऐसे श्लोक प्राप्त होते हैं, जो किसी वेद मन्त्र को लक्ष्य कर लिखे गये हैं- यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है। सम्भवतः किसी वैदिक मन्त्र के तात्पर्य को अपने मत के अनुकूल दिखाने के लिये पुराणकारों ने उन स्थलों को लिखा है। कहीं पर वैदिक शब्द-बहुल शैली को देखने से या कहीं पर श्लोक-प्रतिपादित विषय के वैदिक होने के कारण पुराणकार का पूर्वोक्त आशय स्पष्ट हो जाता है। परन्तु पुराणों में दो-एक स्थलों को छोडकर यह कहीं भी उल्लिखित नहीं है कि अमुक वेदांश की व्याख्या या विवरण अमुक श्लोकों में किया जा रहा है, पर ध्यानपूर्वक देखने से ज्ञात होता है कि उन स्थलों में वस्तुतः वैदिक वचनों की ही व्याख्या है।
पुराणों में वैदिक मन्त्रों की व्याख्यायें अनेक प्रकार से की गई हैं। एक ही मन्त्र की व्याख्याएँ विभिन्न पुराणों में न्यूनाधिक रूप से पृथक् तथा असमान हैं। अतः व्याख्यायित स्थानों के उदाहरण देने से पहले व्याख्याओं का वर्गीकरण करना आवश्यक है। पुराणगत व्याख्याओं को छः भागों में विभक्त कर सकते हैं ।
प्रथम प्रकार की व्याख्या में मन्त्रगत सामान्य पदों में साधारण परिवर्तन अथवा क्लिष्ट पदों के स्थान पर सरल शब्दों का प्रयोग किया गया है, परन्तु मन्त्र का अर्थ तथा भाव परिवर्तित नहीं हुआ है। यथा –

1. मुण्डक उपनिषद्' [4] में "प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते" कहा गया है। मार्कण्डेय पुराण [5] में वर्णित इस मन्त्र में 'लक्ष्य' के स्थान पर 'वेध्य' पद है। साथ ही लिंग पुराण [6] में भी वर्णित इस मन्त्र में "ब्रह्म लक्षणमुच्यते" पाठ है।

वेद के प्रसिद्ध पुरुषसूक्त में "स भूमिं सर्वतः स्पृत्वा अत्यतिष्ठद् दशाङ्गुलम्" [7] पाठ है। ऋग्वेद [8] में "स भूमिं विश्वतो वृत्त्वाऽत्यतिष्ठद् दशाङ्गुलम्" पाठ है। विष्णु पुराण [9] में "सर्वव्यापी भुवः स्पर्शाद् अत्यतिष्ठद् दशाङ्गुलम्" कहा गया है।

2. द्वितीय प्रकार की व्याख्या में मन्त्र के विशिष्ट पदों के स्थान पर अन्य पद दिये गये हैं अथवा विशद व्याख्या की गई है, परन्तु मन्त्र का भाव अपरिवर्तित है। यथा –
   शुक्ल यजुर्वेद' [10] के मन्त्र, "ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्" अर्थात् जगत् में जो कुछ स्थावर जंगम संसार है, वह सब ईश्वर द्वारा आच्छादित है, का सांकेतिक अर्थ श्रीमद्भागवत पुराण [11] में प्राप्त होता है। इसमें 'ईश' पद के स्थान पर 'आत्मा' प्रयुक्त हुआ है।
   ऋग्वेद' [12] के मन्त्र "द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते", जो अथर्ववेद [13] तथा श्वेताश्वतर उपनिषद' [14] में भी प्राप्त होता है तथा जिसका भाव है कि सदा साथ रहने वाले तथा परस्पर सखाभाव रखने वाले जीवात्मा तथा परमात्मा रूपी दो पक्षी एक ही वृक्ष रूपी शरीर का आश्रय लेकर रहते हैं, की भागवत पुराण में स्पष्टपदयुक्त व्याख्या है। [15]
3. तृतीय प्रकार की व्याख्या वह है, जो मूल वैदिक दृष्टि का बहुत कुछ अनुवर्तन करती है तथा प्रायः मन्त्रार्थ को अविकृत रखती है, परन्तु जिसमें मन्त्रलक्ष्य या मन्त्रविषय को साम्प्रदायिक दृष्टि से अंशतः परिवर्तित किया गया है। यथा-
   हिरण्यगर्भसूक्त [16] की कृष्णपरक व्याख्या पदम् पुराण [17] में है। वैष्णवदर्शन में कृष्ण को साक्षात् विष्णु माना जाता है तथा जगत्स्रष्टा हिरण्यगर्भ विष्णु का ही रूपविशेष है। अतः कृष्ण की स्तुति इस सूक्त से की गई है।
   तैत्तिरीय आरण्यक' [18] का मन्त्र "ऋभिः पूर्वह्णे" सूर्यपरक है। परन्तु विष्णुपुराण [19] में व्याख्यायित यही मन्त्र विष्णु परक है।
4. चतुर्थ प्रकार की व्याख्या वह है, जो मूलभाव की विरोधी तथा पूर्णतः साम्प्रदायिक है। यथा-
   ऋग्वेद [20] के मन्त्र "ता वां वास्तून्युश्मसि गमध्यै." की व्याख्या पदम् पुराण [21] में है, जहाँ
   विष्णु के लोक का वर्णन किया गया है। यह व्याख्या वैष्णव साम्प्रदाय की अन्ध मनोवृत्ति की ज्ञापिका है।
5. पञ्चम प्रकार की व्याख्या में बहुदेवतापरक या अनिश्चित देवता वाले मन्त्रों को किसी एक निश्चित देवता पर लगाया गया है। यथा-
   ऋग्वेद [22] के "चत्वारि श्रृङा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासेः अस्य" मन्त्र के पाँच देवता अग्नि, सूर्य, अप गो तथा घृत हैं। इस प्रकार यह एक अनिश्चित देवता मन्त्र है। भागवत पुराण [23] में इसकी यज्ञपरक व्याख्या है तथा स्कन्द पुराण' [24] में इसका शिवपरक अर्थ किया गया है।
6. षष्ठ प्रकार की व्याख्या में मन्त्रोक्त पदार्थ के अतिरिक्त अन्य पदार्थों का भी समावेश किया गया है अथवा मूल वैदिक वाक्य का कुछ अंश छोड़ दिया गया है। यथा-
   ऋग्वेद [25] के मन्त्र "सोमो ददद् गन्धर्वाय." में सोमादि प्रदत्त पदार्थों के नाम नहीं लिये गये हैं, परन्तु गरुण पुराण [26] में व्याख्यायित इस मन्त्र में सोमादि प्रदत्त शौच, वाणी, मेध्यता का उल्लेख है।
   यजुर्वेद 0 [27] के "वेदाहमेतम्" मन्त्र की व्याख्या के प्रसंग में गरुड पुराण [28] में चिद्रूप, विशेषण सम्मिलित किया गया है । मन्त्र में मात्र "तमेव विदित्वा" कहा गया है। किन्तु यह वेदन किस प्रकार का है, इस सम्बन्ध में मन्त्र मौन है।
   अतः स्पष्ट है कि वेद मन्त्रों द्वारा प्रतिपादित अर्थ, सिद्धान्त तथा तथ्य का विस्तार एवं पोषण पुराणों में ही किया गया है। इसके साथ ही ऋग्वेद में मन्त्र के देवताओं आदि के अनुसार ही पुराणगत व्याख्या की समीक्षा की गयी है।

संधर्व सूची

1. (क) इतिहास पुराणं च पञ्चमो वेद उच्चते ।
   भागवत पुराण 1/4/20,70
   (ख) ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वणं चतुर्थमितिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदम् ।
   छान्दोग्य उपनिषद् 7/1/2
   (ग) इतिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदः ।
2. क - इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत् ।
   महाभारत आदिपर्व 1 / 261
   ख - वेदार्थादधिकं मन्ये पुराणार्थ वरानने।
   वेदां प्रतिष्ठिताः सर्वे पुराणे नात्र संशयः ।।
   नारद पुराण 2/24/17
3. पुराणपूर्णचन्द्रेण श्रुतिज्योत्स्नाः प्रकाशिता
   महाभारत आदिपर्व 1/86
4. मुण्डक उपनिषद 2 /2/4
5. मार्कण्डेय पुराण 42 / 7-8
6. लिड पुराण 2 / 92 / 49-50
7. शुक्ल यजुर्वेद 31/1
8. ऋग्वेद 1/90/1
9. विष्णु पुराण 1 / 12 / 58
10. शुक्ल यजुर्वेद 40/1
11. श्रीमद्भागवत पुराण 8 / 1 / 10
12. ऋग्वेद 1 / 164/ 20
13. अथर्ववेद 9/9/20

14. श्वेताश्वतर उपनिषद् 4/6
15. सुपर्णवितौ सदृशौ सखायौ यदृच्छुयैतौ कृतनीडौ च वृक्षे ।
एकस्तयोः खादति पिप्पलान्नमन्यो निरन्नोऽपि बलेन भूयान् ।।
श्रीमद्भागवत पुराण 11 / 11 / 6
16. ऋग्वेद 10/121
17. पद्म पुराण 6/292 / 190-203
18. तैत्तिरीय आरण्यक 3/12/9/1
19. विष्णु पुराण 2/1/10-11
20. ऋग्वेद 1 / 154 / 6
21. पदमपुराण 6 / 255 / 70-73
22. ऋग्वेद 4/ 58/3
23. नमो द्विशीर्ष्णे त्रिपदे चतुः श्रृङ, जय तन्तवे ।
सप्तहस्ताय यज्ञाय त्रयीविद्यात्मने नमः ।।
भागवत पुराण 8/16/31
24. स्कन्द पुराण काशीखण्ड 73 / 93-96
25. ऋग्वेद 10/85/ 41
26. सोमः शौचं ददौ तासां गन्धर्वाश्च शुभां गिरम् ।
गरुड पुराण 1/95 / 19
27. यजुर्वेद 31 / 18
28. गरुड पुराण 1 / 228/6